AmamYZm H r naånam _| ImdH AmamYZm

डॉ. पुखराज लूनिया

जैन परम्परा में रुग्ण एवं मरणासन्न व्यक्ति को आराधना सुनाने की पद्धति सदियों से चली आ रही है। जीवन की लम्बी अवधि में नाना प्रकार का प्रमाद होता है, आसक्तिवश अकरणीय हो जाता है। अनेक स्खलनाएं होती हैं। राग-द्वेष अहंकार आदि आत्मा को कलुषित बना देते हैं। किन्तु जो मनुष्य वर्तमान जीवन में ज्ञान, दर्शन, चारित्र (संयम) की सम्यक् आराधना करता है वह वर्तमान और भावी जीवन को उन्नति की ओर ले जाता है। इसीलिए मृत्यु की निकटता के समय जीवन में घटित विराधनाओं का प्रायश्चित्त कर आराधना के माध्यम से चित्त की वृत्तियों को निर्मल बनाने का उपक्रम किया जाता है।

जिस प्रकार प्रतिक्रमण में प्रतिदिन समस्त जीवों से क्षमायाचना कर आत्मा को निर्मल और हल्का बनाया जाता है, उसी प्रकार जीवन की संध्या में देव-गुरु-धर्म की आराधना करते हुए मनुष्य, देवता तथा समस्त पंचेन्द्रिय जीवों से क्षमायाचना कर आत्मा को कषायों और कर्मों से मुक्त करने का प्रयत्न किया जाता है। जैन संस्कृति के मुख्य आधार अहिंसा, क्षमा, मैत्री, कृजुता आदि सात्त्विक गुण हैं। जो जैन श्रावक-श्राविका अथवा साधु-साध्वी इन गुणों की आराधना नहीं करता, वह सही अर्थों में जैन कहलाने का अधिकारी नहीं है।

आराधना की प्रथम रचना आचार्य अभयदेवसूरि की मिलती है जो अनेक शताब्दियों पुरानी है। उसके बाद लगभग तीस महान् आचार्यों और मनीषी पण्डितों ने आराधना विषयक ग्रन्थों की रचना की है। इन ग्रन्थों में आचार्य श्री शिवकोटि (शिवाचार्य) की भगवती आराधना (मूलाराधना) तथा तेरापंथ के चतुर्थ आचार्य श्रीमद् जयाचार्य की "आराधना" विशेष उल्लेखनीय हैं। जयपुर के प्रमुख भक्तकवि श्रावक श्री गुलाबचन्द लूनिया कृत श्रावक आराधना (सम्वत् १६७४) आराधना विषयक ग्रन्थों में अन्तिम है, जिसकी रचना जयाचार्य कृत आराधना की तर्ज पर की गयी है। जयाचार्य कृत आराधना जहाँ साधुओं को लक्ष्य पर बनायी गयी है, लूणिया जी की "श्रावक आराधना" श्रावक वर्ग को लक्ष्य कर निर्मित की गई है।

दोनों ही आराधना ग्रन्थों में दस द्वार हैं, जिनके माध्यम से आराधक अपनी आत्मा का परिष्कार करता हुआ जीवन को संस्कारित करता है। ये दस द्वार हैं:- १. आलोचना द्वार, २. व्रत उच्चारण द्वार, ३. क्षमायाचना द्वार, ४. पाप-व्युत्सर्ग द्वार, ५. चतुःशरण प्रतिपत्ति द्वार, ६. दुष्कृत निंदा द्वार, ७. सुकृत अनुमोदना द्वार, ८. भावना द्वार, ६. अनशन द्वार तथा १०. पंच-परमेष्ठि नमस्कार द्वार।

आराधना की परम्परा में श्रावक आराधना

भगवती आराधना २१४८ पदों का एक प्राचीन विशाल ग्रन्थ है, जिसकी रचना कई शताब्दियों पहले शिवाचार्य ने की थी तथा इस ग्रन्थ पर विक्रम की तेरहवीं शताब्दी तक अनेक टीकाएं, सार आदि लिखे जा चुके हैं, जिनमें सबसे महत्वपूर्ण है विजयोदया टीका। विशेष बात यह है कि भगवती आराधना के रचनाकार एवं विजयोदया के टीकाकार दोनों ने ही श्वेताम्बर तथा दिगम्बर, दोनों ही मान्यताओं के ग्रन्थों से आराधना के तत्त्वों को एकत्र कर शुद्ध रूप से मानव कल्याण की दृष्टि से रचनाएं की थीं।

जैन दर्शन के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ. ए.एन. उपाध्ये के अनुसार– "जैन परम्परा में प्रारम्भ से ही आराधना का अत्यन्त महत्व रहा है। यथार्थ में आराधनापूर्ण जीवन ही सच्चा जीवन है, दूसरे शब्दों में आराधना पूर्वक मरण ही यथार्थ मरण है। उसके अभाव में न जीवन जीवन है और न मरण मरण है।"

भगवती आराधना में मुख्य रूप से मरण-समाधि का कथन है। मरते समय की गयी आराधना ही यथार्थ आराधना है, उसी के लिए जीवन भर आराधना की जाती है। उस समय विराधना करने पर जीवन भर की आराधना निष्फल हो जाती है। अतः, यह भी आवश्यक है कि जीवन भर आराधना का अभ्यास किया जाये, ताकि मरते समय यथार्थ आराधना की जा सके। वस्तुतः, जो मरते समय आराधक होता है, यथार्थ में उसी के सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक्तप की साधना सफल होती है।

इस दृष्टि से आराधना की कल्याणकारी परम्परा में श्री गुलाबचन्दजी लूणिया की कृति "श्रावक आराधना" जन सामान्य के आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने वर्तमान जीवन और भावी जीवन को उज्ज्वल और उन्नत बना सकता है।